IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882
INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

कुषाण युग की सामाजिक संरचना में वर्ण-व्यवस्था के महत्व

डॉ0 श्रद्धा
पी0 एच0 डी0
(प्राचीन इतिहास,संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग)
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समाज शब्द एक जनसमूह समुदाय अथवा सम्मेलन का द्योतक है। दिव्यावदान, बुद्धचरित, सौन्दरानंन्द एवं मिलिन्दपञ्हो के विवरण ईस्वी की प्रथम तीन शताब्दियों के सामाजिक जीवन रीति रिवाज, व्यवहार आदि पर अच्छी सामग्री संजोये है। कुषाण युग में समाज कई वर्गों में विभाजित था परन्तु उसका आधार व्यक्ति द्वारा अपनाये गये व्यवसाय थे। प्रत्येक वर्ग में कई जातियों के लोग होते थे। जातियाँ व्यक्तियों के जन्म से ही परिगणित होती थी। जाति के रुप में चातुर्वर्ण[1] का उल्लेख मिलता है। दिव्यावदान[2] में इसे चतुषक कहा गया है। इनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र थे। चतुर्वर्ण[3] के साथ ही साथ अंगविज्जा[4] में मिश्रित जातियो के वर्णन है। मुख्यरुप से कुषाण समाज में वैदिक काल से चले जा रहे दो वर्ग' अज' और 'पस'[5] प्रमुख थे। 'अज' से तात्पर्य आर्यों से और 'पस' से तात्पर्य दासों से था। अत्याधिक निम्न वर्ग के लोग म्लेच्छ[6] कहे गये है। चतुषक में ब्राह्मण को आधिक प्रतिष्ठा प्रदान की गयी है।

कुषाण कालीन समाज बहु व्यवसायी था। समाज के अभिजात्य वर्गो में धनसम्पति के आधार पर उसका स्तर निर्धारित होता था। जीवकोपार्जन द्वारा धनी बना शूद्र भी अभिजात्य वर्ग में गिना जा सकता था। लेकिन निर्धन वैश्य को दास नहीं कहा जा सकता था।[7] कुषाण समाज में यद्यपि जन्म से जाति का निर्धारण होता था। फिर भी व्यक्ति कोई भी व्यवसाय अपना सकता था। समाज में वणिक वर्ग की प्रधानता थी। अलग-अलग व्यवसाय का एक सर्वोच्च अधिकारी प्रमुख होता था। जिसे श्रेष्टी कहते थे। ये बैंकर या धन संग्रह करने का भी काम करते है। यद्यापि मुद्राओं से इस प्रकार की जानकारी नहीं प्राप्त होती है। लेकिन मूर्तियों पर उत्कीर्ण लेखों में विभिन्न श्रेणियों के नाम प्राप्त होते है। जैसे- सुनार,[8] लुहार,[9] कुम्भकार,[10] समितकार,[11] धन्निक[12] या धान्यवर्ग, कार्पसिक,[13] रयगिनि,[14] प्रावरिक,[15] गन्धिक,[16] कालवडाज[17]। मथुरा के अभिलेख में कायस्थों का भी उल्लेख प्राप्त होता है। मिलिन्दपञ्हो में

इनके द्वारा लेखनकर्म किये जाने का विवरण है।[18] इनके अतिरिक्त समाज में लोगों का मनोरंजन करने एव अपने जीवकोपार्जन हेतु नट, नर्तक, शैलालक एवं गणिकाएँ थी। शैलालक समुदाय का प्रमुख नन्दीवन था। जिसके पुत्र छन्दक भाइयों ने शिलापट्ट दान दिया था। समाज में गणिकाओं को भी आदर की दृष्टि से देखा जाता था। ये उपासना पूजा एवं दान देने को स्वतंत्र थी। इनके कई स्तर होते थे। जैसा कि एक लेख में गणिका लवण शोभिका को अदानिका तथा गणिका बसु को नदानिका कहा गया है।

बोड्डो प्रकार की मुद्रा से यह स्पष्ट होता है कि कुषाण युगीन समाज में केवल एक हीधर्म अस्तित्व मे नहीं था[19] अपितु अलग-अलग क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के धर्मों का वर्चस्व था। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार याज्ञिक का पुरस्कार स्वर्ग-लोक है। उनकी इस प्रकार की मुद्राओं को देखने से ऐसा प्रतीत होता है। कि कुषाण शासकों ने कर्मफल को महत्वपूर्ण माना था।[20]

वर्ण-व्यवस्था

वर्ण शब्द की उत्पत्ति 'वृ' धातु से होती है जिसका अभिप्राय 'वरण' करना । वर्ण व्यवस्था को 'वर्ण-चतुष्ट्य' भी कहा जाता है।[21] कुषाण विदेशी-बर्बर जाति थी जिसकी अपनी निजी कोई वर्ण-व्यवस्था न थी। महावस्तु में वर्णक्रम क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य तथा शूद्र का उल्लेख मिलता है।[22] बौद्ध-साहित्य में वर्ण-व्यवस्था का स्वरूप जन्मना न होकर कर्मणा स्वीकार किया गया है अर्थात जो व्यक्ति तेजस्वी, तपस्वी, पण्डित, विनीत एवं सदाचारी होगा वही ब्राह्मण-पद का वास्तविक अधिकारी है।[23] इतिहासकार केतकर के अनुसार "उस समय ब्राह्मण वर्ण एवं जाति दोनों थे परन्तु क्षत्रिय व वैश्य केवल वर्ण थे जाति नहीं तथा शूद्र भी जाति थी"।[24]

ब्राह्मण वर्ण-

कुषाण कालीन साहित्य[25] में ब्राह्मणों एवं सन्यासियों के दस प्रकार यथा- आजीवक,[26] निग्गंठ[27] तथा अर्धफालक[28] (ये तीनों जैन धर्म के अनुयायी थे) मुडंशावक[29] (मुड़ासिर), जटिलक[30] (जटाधारी), परिब्राजक[31] (ब्राह्मण संन्यासी), मांगधिक, त्रेदंडिक, अविरुद्धक, गौतमक, एवं देवधम्मिक[32] उल्लिखित है। इनमें से कई के प्रस्तर फलकों में अंकन भी प्राप्त होते है। बुद्ध के महापरिनिर्वाण के दृश्यों में सिर झुकाए एक सन्यासी खड़ा है जिसके साथ ही तीन डण्डे आपस में जुड़े रखे है। इन्हें ही त्रिदण्डिन कहा जाता है। गांधार के एक अंकन में जनेऊ पहने ब्राह्मण[33] का अंकन है। प्राप्त लेखों एवं दृश्यो के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि ब्राह्मणों का मुख्य कार्य पूजा-पाठ यज्ञ-हवन, पठन-पाठन एवं कर्मकाण्ड कराना होता है। तथापि अन्य प्रकार के व्यावसाय भी अपनाने के लिए उन्हे रुकावट नहीं था।

कुषाण शासको के द्वारा ब्राह्मणों को प्रशासनिक पदों पर भी नियुक्त किया गया था। धनी ब्राह्मण कभी-कभी अन्य सम्प्रदाय वालों को भी दान देते थे जैसा की शैग्रव गोत्रीय ब्राह्मण ने जमालपुर में बौद्धो के लिए एक आराम (उद्यान) और ताल बनवा कर दान दिया था।[34]

क्षत्रिय वर्ण –

सामाजिक परिवेश में वर्णों के क्रम में द्वितीय स्थान क्षत्रियों को प्राप्त हुआ था। इनकी उत्पत्ति त्रिप्टुप-छन्द से हुई मानी जाती है। द्विज होने के कारण क्षत्रिय वेदध्ययन के योग्य माने जाते थे। कुषाण युग में ब्राह्मण एवं क्षत्रिय दोनों प्रशासनिक श्रेणी में थे, जिनके मध्य आध्यात्मिक व सांसारिक प्रभुत्व विभक्त था।[35]

कुषाण काल मे क्षत्रिय अधिकतर सैनिक होते थे। मथुरा से प्राप्त कार्तिकेय की लेखांकित मूर्ति की स्थापना चार क्षत्रिय भाइयो ने विजय हेतु की होगी।[36] गांन्धार के फलक पर कतार से खड़े पतवारधारियों के अंकन जलमार्ग के महत्व को दर्शाते है।

वैश्य वर्ण-

कुषाण-कालीन वर्ण-व्यवस्था के क्रम में तृतीय स्थान वैश्य-वर्ण को मिला। तत्कालीन समाज में वैश्य वर्ण ने पूर्व-काल की अपेक्षा महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था। जो वैश्य वाणिज्य कर्म द्वारा जीविका चलाता था 'वणिक्' कहलाया।[37] अनेक प्रकार के वाणिज्य-कर्म करने के अनुरूप इन्हें काष्ठ-वाणिज्य, तृण-वाणिज्य, स्तम्भ-वाणिज्य, शर्कर-वाणिज्य, फल-वाणिज्य तथा मूल-वाणिज्य कहा गया।

कुषाण काल में बौद्ध-धर्म के प्रचलन के फलस्वरूप अनेक सामाजिक परिवर्तन हुए जिसमें वैश्यों का पर्याप्त हित हुआ तथा वैश्यों को प्रशासन में ब्राह्मण व क्षत्रियों की दृष्टि में उच्च-स्थान मिला। इनकी गणना निम्न-वर्ग के स्थान पर मध्यम-वर्ग में होने लगी थी। वैश्य जनों को उच्च पदों पर नियुक्त किया जाने लगा तथा राजकीय मामलों में भी वैश्यों से परामर्श लिया जाने लगा था। कुषाण युग में व्यावसायिक संगठन पर्याप्त व्यवस्थित तथा धनी थे।[38] याज्ञवल्क्य ने व्यावसायिक-संगठनों में श्रेणी, नैगम, पूग, व्रात, गण आदि नाम बताये हैं। मथुरा के हुविष्क के अभिलेख में आटा-व्यापारी-संघ (समितकर) का उल्लेख मिलता है जिसके पास एक प्रमुख नें निश्चित धन-राशि जमा की थी ताकि प्राप्ति-ब्याज से सौ ब्राह्मणों को प्रतिदिन भोजन कराया जा सके।[39] इससे यह बात स्पष्ट है कि ये संघ जमा धनराशि से उपकरण एवं कच्चा माल लाकर सामग्री उत्पादित करते थे तथा उसे बेचकर ब्याज अदा करते थे।[40] वैश्य कर के रूप में अन्न का आठवाँ भाग निर्धारित था, यह आपातकाल के लिये अतिरिक्त कर था। उल्लेखनीय है कि कुषाण युगीन शिल्पियों ने अत्यधिक उन्नति की थी। महावस्तु में हमें 11 प्रकार के शिल्पियों की जानकारी मिलती है।

शूद्र वर्ण-

साहित्य-ग्रन्थों में कुषाण-युगीन शूद्र-वर्ण की सामाजिक-व्यवस्था का विस्तृत वर्णन है इतिहासकार रंगास्वामी के अनुसार- 'यद्यपि शूद्र वैश्यों के साथ व्यवसाय में संलग्न एवं सम्पन्न हो रहे थे तथापि उनसे निम्नतम कर लिया जाता था'। संभवतः वह जन-साधारण द्वारा दया के पात्र माने जाते थे। अभिलेखीय साक्ष्यों से स्पष्ट है कि तत्कालीन शिल्पकारों की नवीन श्रेणियों तथा नवीन-शिल्पों के निर्माण द्वारा शूद्रों की सामाजिक व आर्थिक दशा में आश्चर्यकारी परिवर्तन आया। मथुरा एवं पश्चिम-दक्षिण क्षेत्र में रोम से हुए व्यापार में जुलाहों ने भी शिल्पी के रूप में पर्याप्त उन्नति कर ली थी तथा अपना स्वतन्त्र व्यवसाय स्थापित कर लिया था।[41] इस प्रकार पुरालेखों से विदित है कि इन शिल्पियों के अनेक समृद्ध संघ बन गये थे। दिव्यावदान से ज्ञात होता है कि तत्कालीन समाज में भी आज की ही भाँति मजदूरों के पृथक मुहल्ले होते थे। इन्हें भृतक-वीथि कहा जाता था।[42] अनुशासन-पर्व से ज्ञात होता है कि शूद्र चारों आश्रमों से केवल गृहस्थाश्रम के योग्य थे क्योंकि वह वेदाध्ययन नहीं कर सकते थे।[43]

कुषाण समाज में दान देने का अधिकार द्विज वर्ण को था परन्तु ग्रहण करने के योग्य केवल ब्राह्मण माने गए। संस्कार-विहीन एवं धर्म के अयोग्य शूद्रों का दान से कोई सम्बन्ध न था। द्वितीय शताब्दी ई0 में गौतमी पुत्र श्री शतकर्णी के अथक प्रयास द्वारा वर्ण-व्यवस्था को सुव्यवस्थित करने में सफलता मिली। जिसके फलस्वरूप शूद्रों के सामाजिक-दशा में महान् सुधार आया।

वर्ण संकर जातियाँ-

मनु के अनुसार चार वर्ण हैं, पाँचवाँ कोई वर्ण नहीं है। अतः वर्ण संकर जातियाँ शूद्र-वर्ण के अन्तर्गत मानी जाती रही होंगी। एक ही गोत्र में विवाह होने से तथा संस्कार विहीन होने पर वर्ण-संकर जातियाँ उत्पन्न हुई हैं।[44] मनु ने उन जातियों की एक लम्बी सूची प्रस्तुत की है जो विभिन्न कारणों से वर्णसंकर कहलाई।

अन्तर्जातीय विवाहोपरान्त उत्पन्न सन्तान के आधार पर जातियाँ-

अम्बष्ठ, निषाद, पारशय, उग्र, सूत, मागध वैदेह, आयोगव, क्षता, चण्डाल, आवृत्त, आभीर, घिग्वण, पुक्कस, कुक्कुट और शैख, झल्ल, मल्ल, विच्छवि, नट, कारण, खस, द्रविण, सुधन्वाचार्य, कारूष, विजन्मा, मैत्र, सास्वत, मैत्रेयक, सौरिन्ध, भार्गव, दाश, कैवर्त, कारावर, अनध्र, भेद, पांडुसोक, आहिन्डक, सोपाक आदि।

व्यवसायों के आधार पर उत्पन्न जातियाँ- अयस्कार, कुम्भकार, चर्मकार, तक्षा, तैलिक, नट, वेण, रथकार आदि।

स्थान विशेष के काम पर आधारित जातियाँ- अम्बष्ठ, मागध, मल्ल एवं वैदेहक।

जाति-विशेष पर आधारित जाति- आभीर, किरात एवं शक।

संस्कार-विहीन शूद्र-जातियाँ मनुस्मृति एवं महाभारत में वर्णित शक, यवन, क्षत्रिय कहा गया है परन्तु क्रिया लोप के कारण यह शूद्र मानी गई।[45]

व्रात-संज्ञक जातियाँ –

द्विज द्वारा समानवर्ण वर्ण वाली स्त्रियों में उत्पन्न यज्ञोपवीत-संस्कार के अयोग्य एवं सावित्री के भ्रष्ट पुत्रों को व्रात्य कहा गया। व्रात्यसंज्ञक-ब्राह्मणी से ब्राह्मण में उत्पन्न-पुत्र भूर्जकण्टक-पापी होता था। इसी भूर्जकण्टक के देशभेद द्वारा आवन्त्य, वाटधान, पुष्पध और शैख आदि नाम पड़े। इसी प्रकार व्रत्य-संज्ञक-क्षत्रिय से क्षत्रियों में उत्पन्न पुत्र झल्ल, मल्ल, लिच्छवी, नट, करण, खस और द्रविड़ नाम के होते थे।

प्राचीन काल की भाँति कुषाण-काल में भी विवाह एक पवित्र संस्कार माना जाता था। सामान्यतः सभी वर्णों को अपने ही वर्णों में विवाह की करने की अनुमति थी। इस प्रकार के विवाह द्वारा उत्पन्न सन्तान जन्म से ही माता-पिता के वर्ण की मानी जाती थी परन्तु समाज में इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार के विवाह भी प्रचलित हुए थे।

---

[1] मिलिन्दपञ्हो, पृ0 178 / दो / 5
[2] दिव्यावदान, पृ0 428 / 4
[3] अंगविज्जा,पृ0 55
[4] अंगविज्जा, नौ / 40-46 / पृ0 101-103
[5] अंगविज्जा, 57, पृ0 218
[6] अंगविज्जा, 24, पृ0 149
[7] मुखर्जी, बी0 एन0, मथुरा एण्ड इट्स सोसायटी, पृ0 130
[8] मथुरा संग्रहालय, संख्या 121, 12.260. जेनार्ट, मथुरा इन्सक्रिप्सन्स, पृ0 187
[9] ल्युडर्स लिस्ट, संख्या 29, 53. लखनऊ संग्रहालय, संख्या जे 24, इपिग्राफिआ इण्डिका, अंक 1, पृ0 383, संख्या 4.
[10] मुखर्जी, बी0 एन0, मथुरा एण्ड इट्स सोसायटी, पृ0 188. ल्युडर्स लिस्ट संख्या 1137.
[11] मथुरा संग्रहालय, संख्या 1930, अग्रवाल, वाशुदेव शरण, मथुरा म्यूजियम कैटलॉग, भाग 4, पृ0 138.
[12] मथुरा संग्रहालय, संख्या 1930, ल्युडर्स लिस्ट, संख्या 1180
[13] लखनऊ संग्रहालय, संख्या जे 26, जेनार्ट, मथुरा इन्सक्रिप्सन्स, पृ0 47
[14] ल्युडर्स लिस्ट, संख्या 32
[15] मथुरा संग्रहालय, संख्या 17-1316, 18-5757, जेनार्ट, मथुरा इन्सक्रिप्सन्स, पृ0 165, सं0 124, पृ0 110 सं0 74
[16] ल्युडर्स लिस्ट, संख्या 37, 68, 70-76. सौन्दरानन्द, चार, 26. ललितविस्तर, पन्द्रह, 218
[17] मुखर्जी, बी0 एन0, मथुरा एण्ड इट्स सोसायटी, पृ0 39, 153
[18] मथुरा संग्रहालय, संख्या 78-34, मुखर्जी, बी0 एन0, मथुरा एण्ड इट्स सोसायटी, पृ0 193
[19] सिंह, मीनाक्षी 2006 गुप्त युगः एक मुद्राशास्त्रीय अध्ययन, वाराणसी प्रकाशन, पृ0 44
[20] सिंह, रामवृक्ष 2008-09 (10वाँ संस्करण) प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास, स्टुडेण्ट्स फ्रेण्डस,इलाहाबाद पृ0 231
[21] गीता, 18/41
[22] महावस्तु, 2/139
[23] दिव्यावदान, 331/5-6, 328/5-
[24] केतकर,एस0 बी0, हिस्ट्री आफ कास्ट इन इण्डिया, पृ0 98-9
[25] मज्झिम निकाय, 2, पृ0 83-90
[26] महतो, एम0 एस0, जातक कालीन भारतीय संस्कृति, पृ0 240
[27] गांधार स्कल्पचर्स इन द पाकिस्तान म्यूजियम, चित्र 116
[28] लखनऊ संग्रहालय संख्या जे0 20, जे0 105, जे0 623
[29] गांधार स्कल्पचर्स इन द पाकिस्तान म्यूजियम, चित्र 137, 143, 144, 418, 423, 425. डायनेस्टिक आर्ट ऑफ कुषाण चित्र- 42, मथुरा संग्रहालय 55 – 387.
[30] महावग्ग, एक, 38 , 3. गांधार स्कल्पचर्स इन द पाकिस्तान म्यूजियम चित्र 432, 433

[31] गांधार स्कल्पचर्स इन द पाकिस्तान म्यूजियम, चित्र 428, 434, 437,

[32] मनुस्मृति, बारह, 10. जी0 ए0 पी0, चित्र 137. मार्शल, द बुद्धिस्ट आर्ट ऑफ गांधार, चित्र 72. ज0 रा0 ए0 सो0, 1898, पृ0 197

[33] गांधार स्कल्पचर्स इन द पाकिस्तान म्यूजियम, चित्र 429

[34] जेनार्ट, मथुरा इन्सक्रिप्सन्स, पृ0 60

[35] शर्मा, आर0 एस0, शूद्रों का प्राचीन इतिहास, पृ0 184

[36] शर्मा, आर0 सी0, मथुरा म्यूजियम एण्ड आर्ट, पृ0 57. मथुरा संग्रहालय संख्या 42.2949

[37] दिव्यावदान, 329/5,6,14

[38] इपिग्राफिआ इण्डिका, 21/10 पृ0 55

[39] इपिग्राफिआ इण्डिका, 21/10/60 समितकर

[40] शर्मा, रामशरण, शूद्रों का प्राचीन इतिहास, पृ0 179

[41] ल्युडर्स नं0 32, 53-4, 345, 857, 1005, 1092, 1129

[42] दिव्यावदान, 304/7-8

[43] महाभारत, 3/165/10

[44] मनुस्मृति, 10/24

[45] मनुस्मृति, 10/248